पुष्पलता

विरुद्ध

विजय कुमार (मृत) विधिक प्रतिनिधि द्वारा एवं अन्य

(२०२२ की सिविल अपील संख्या ४०७८)

०५ सितंबर, २०२२

[उदय उमेश ललित, मुख्य न्यायाधीश , एस. रवींद्र भट और सुधांशु धूलिया, न्यायाधीशगण]

बेनामी संव्यवहार (निषेध)अधिनियम, ९८८-४-(४)(क) मूल प्रथम वादी-एचयूएफ के क्रेता ने अवयस्क पुत्रों (प्रथम और द्वितीय प्रतिवादी) के नाम पर संपत्ति खरीदी - पहली संपत्ति-वाद संपत्ति जो पहले प्रतिवादी के नाम पर खरीदी गई थी, बाद में उसके द्वारा बेची गई थी - मूल प्रथम वादी द्वारा अपने, अपनी पत्नी (जिनका देहांत हो गया) और दो बेटियों की ओर से, अपने दो बेटों (प्रथम और द्वितीय प्रतिवादियों) और संपत्ति के खरीदारों के खिलाफ, बिक्री विलेख को अपास्त करने और स्वत्व की घोषणा के लिए दायर किया गया वाद - वादी ने आग्रह किया कि वे और पहले और दूसरे प्रतिवादी, एक एचयूएफ के सदस्य थे, और पहला प्रतिवादी एक बेनामी मालिक था जो वाद संपत्ति का हस्तांतरण नहीं कर सकता था-वाद खारिज-अपील पर अभिनिर्धारित किया गयाः जो व्यक्ति यह आरोप लगाता है कि संपत्ति बेनामी है और वास्तविक स्वामी की ओर से नाममात्र के लिए रखी गई हैं । उन मामलों में जो अपवाद हैं, धारा-४(३)(क) उस तथ्य को साबित करने के प्रारंभिक भार को विस्थापित करना होगा - ऐसा प्रमाण साक्ष्य के माध्यम से या संचयी रूप से परिस्थितियों के माध्यम से हो सकता है। वर्तमान मामले में, पहले वादी ने साबित किया था कि संपत्तियां उसके धन से खरीदी गई थीं, और बेटे अवयस्क थे, जिनके पास आय का कोई स्रोत नहीं था - सभी कार्यवाहियों के दौरान दूसरे प्रतिवादी की स्थिति यह थी कि संपत्ति पहले वादी की ही थी, उसने वाद अभिकथनों में स्वीकार किया-वादी ने यह भी साबित किया कि उसके पास संपत्ति का कब्जा था, किरायेदारों के सकारात्मक साक्ष्य को प्रस्तुत कर, जिन्होंने उसे किराया दिया-इन परिस्थितियों में, १९८८ अधिनियम के धारा-४(३)(क) के अर्थ के भीतर बेनामी स्वामित्व स्थापित करने के लिए आवश्यक तत्व, बीनापानी पॉल और वल्लाम्मल में निर्णयों के संदर्भ में पहले वादी द्वारा संतुष्ट किया गया है-विचारण न्यायालय और प्रथम अपीलीय न्यायालय द्वारा तैयार किए गए निष्कर्ष स्पष्ट रूप से गलत हैं, अभिलेख पर प्रस्तुत साक्ष्य के अनुसार -उच्च न्यायालय ने विधि की सही स्थिति न समझ पाने की त्रुटि की-वाद पूरी तरह से डिक्री किया गया। भारत का संविधान-अनुच्छेद १३६ क्षेत्राधिकार की विवेकाधीन

प्रकृति-समवर्ती निष्कर्षों के साथ हस्तक्षेप-अभिनिर्धारित किया गया : यह सही है कि न्यायालय शायद ही कभी समवर्ती निष्कर्षों में हस्तक्षेप करेगा, हालांकि, अनुच्छेद १३६ के तहत अधिकार क्षेत्र व्यापक है, और असाधारण मामलों में, हस्तक्षेप की आवश्यकता होती है। *मार्सेल मार्टिन्स विरूध्द एम. प्रिंटर (२०१२) ५ एस.सी.सी ३४२, कलेक्टर सिंह विरूध्द एल.एम.एल लि. (२०१५) २ एस.सी.सी ४१० [२०१४] १३ एस.सी.आर ७२५, निजाम विरूध्द राजस्थान राज्य (२०१६) १ एस.सी.सी ५५०: [२०१५] १० एस.सी.आर ७८६ बिनापानी पॉल विरूध्द प्रतिमा घोष (२००७) ६ एस.सी.सी १००: [२००७] ५ एससीआर २६४, वल्लाम्मल विरूध्द सुब्रमण्यम [२००४] १ एस.सी.आर. ९६६-पर निर्भर है।*

संदर्भित न्यायदृष्टांत

[२००४] सुप्रा १ एस.सी.आर. ९६६	.....	पैरा १०
[२००७] ५ एस.सी.आर. २६४	.....	पैरा २१
[२०१२] ५ एस.सी.सी. ३४२	.....	पैरा २२
[२०१४] १३ एस.सी.आर. ७३५	.....	पैरा २७
[२०१५] १० एस.सी.आर. ७८६	.....	पैरा २८

सिविल अपीलीय क्षेत्राधिकार: सिविल अपील नंबर. ४०७८/२०२२.

निर्णय और आदेश दिनांक ०४.०४.२०१३ को मध्य प्रदेश के उच्च जबलपुर का एस.ए. नंबर १७३८/२००५.

अनुपम लाल दास, सीनियर अधिवक्ता, कुणाल वर्मा, अश्विन कुमार नायर, अधिवक्ता। अपीलार्थी के लिए।

डी.के.ठाकुर, अभिषेक कुमार, सुश्री दीक्षा सग्गी, राम लाल रॉय, के. कृष्ण कुमार, सुश्री युगांधरा पवार झा, वरिंदर कुमार शर्मा, उत्तरदाताओं के लिए अधिवक्ता।

न्यायालय का निर्णय एस. रवींद्र भट, न्यायाधीश . द्वारा प्रतिपादित

१. पक्षकारों की सहमति से, इस मामले की अंतिम सुनवाई की जा रही है। वर्तमान अपील मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय जबलपुर की द्वितीय अपील एवं विचारण न्यायालय द्वारा पारित आदेश व डिकी की पुष्टी करते हुए निर्णय को चुनौती देती है।

तथ्य एवं विवादः

२. मूल प्रथम वादी-लक्ष्मी प्रसाद, हिंदू अविभाजित परिवार (एच.यू.एफ) के कर्ता थे, जिसमें उनकी पत्नी, जानकी बाई (दितीय वादी), दो बेटियाँ-सरिता व पुष्पलता (दितीय और तृतीय वादी), व दो बेटे-विजय कुमार एवं राजेंद्र कुमार (प्रथम दो प्रतिवादी) शामिल थे। एतद् पश्चात पक्षकारों को नाम, या 'वादी' एवं 'प्रतिवादी' के रूप में संबोधित किया जायेगा।

३. लक्ष्मी प्रसाद द्वारा अनुबंध पत्र दिनांक १५.०२.१९६० के माध्यम से खसरा क्. ४४/२ (बंदोबस्त क्र . १०२, पटवारी हलका नंबर ६५, ललीपुरा वार्ड) मे से १.६ एकड़ क्षेत्रफल की संपित्त (एतद पश्चात "प्रथम संपत्ति") क्रय की गई थी। यह प्रथम संपत्ति विजय कुमार (उसका पुत्र एवं प्रतिवादी) के नाम से क्रय की ग थी। एक अन्य संपत्ति क्षेत्रफल २३३२ वर्गफीट (प्लाट क्. १/१ नजूल शीट नंबर २२बी; एतद पश्चात "दितीय संपत्ति") लक्ष्मी प्रसाद द्वारा दिनांक २१/०२.०५.१९६६ को अपने दोनो पुत्र विजय कुमार एवं राजेन्द्र कुमार के नाम से क्रय की गई थी। यह अभिकथित है कि लक्ष्मी प्रसाद द्वारा अपनी आय से दो मजिला इमारत का निर्माण किया गय था। इसी तरह, लक्ष्मी प्रसाद ने विजय कुमार व राजेन्द्र कुमार के नाम से दो और संपित्तयां, १५० वर्गफीट दिनांक १८.१२.१९७२ एवं ४५३ वर्गफीट दिनांक २५.०५१९७३ को क्रय की गई थी। लक्षमी प्रसाद के अनुसार उक्त संपित्तयां उसके द्वाराअपने बच्चो के उचित भरण पोषण एवं शिक्षा के लिये क्रय की गई थी, लक्षमी प्रसाद निर्माण कार्य के व्यवसाय में समिलित था।

४. दिनांक ०३.०५.१९९४ को विजय कुमार ने तृतीय प्रतिवादी (एतद् पश्चात क्रेता) को १.६ एकड़ भूमि खसरा क्. ४४/२ (प्रथम संपत्ति) मे से ०.०४७ हैक्टेयर भूमि बेच दी गई थी, जोकि इस वाद की विषय वस्तु है(एतद पश्चात वादग्रस्त संपत्ति)। उसने अभिकथित रूप से ०.०१९ हैक्टेयर भूमि दिनांक २१.०६.१९९५ एवं ०.०४९ हैक्टेयर भूमि दिनांक २७.०८.१९९६ को प्रितवादी क्. ३ को (अंतरिम व्यादेश के बाद भी) विक्रय कर दी।

५. दिनांक ३.०९.१९९४ को लक्ष्मीप्रसाद द्वारा स्वंय के, अपनी पत्नी (जिनका निधन वर्ष १९९६ में हो गया) और दो बेटियों की ओर से अपने दो बेटों (प्रथम और द्वितीय प्रतिवादी) एवं संपत्ति के खरीदारों (तृतीय एवं चतुर्थ प्रतिवादी) के विरूध्द वाद प्रस्तुत कर विक्रय पत्र दिनांक ३०.०५.१९९४ को निरस्त करने एवं स्वत्व घोषणा के अनुतोष् चाहे गये। वादीगण द्वारा यह व्यक्त किया गया था कि वादीगण एवं प्रथम एवं दितीय प्रतिवादी हिन्दु संयुक्त परिवार के सदस्य थे एवं मूल प्रथम प्रतिवादी (विजय कुमार) बेनामी स्वामी था, जो वादग्रस्त संपत्ति का अतरण नहीं कर सकता था। यह अभिकथित किया गया था कि संपत्तियां प्रथम वादी लक्ष्मीप्रसाद द्वारा क्रय की गई थी ए्र प्रथम दो प्रतिवादी अवयस्क थे एवं उनके पास आय का कोई साधन नहीं था। राजेन्द्र कुमार द्वारा दिनांक १६.०२.१९९५ को लिखित कथन प्रस्तुत किया गया एवं विजय कुमार एवं तृतीय प्रतिवादी द्वारा

अपने-अपने लिखित दिनांक ०७.१२.१९९९ को प्रस्तुत किये गये। इस दौरान वर्ष १९९६ में विचारण न्यायालय द्वारा प्रतिवादीगण को संपित्त को अंतरण करने से एवं वर्ष् २००२ में संपित्त पर निर्माण कार्य करने से निषेधित किया गया।

६. विचारण न्यायालय द्वारा १४ विवाद्यको की विरचना की गई, परंतु मुख्य रूप से विचारण न्यायालय के समक्ष यह विवाद्यक था कि क्या प्रथम वादी एकल स्वामी था, जिसका क्रय की गई संपत्तियों पर कब्जा था एवं इसके परिणाम स्वरूप, क्या पहला प्रतिवादी विवादित भूमि को बेचने का अधिकारी नहीं था। विचारण न्यायालय द्वारा निर्णय दिनांक २९.०९.२००४ के माध्यम से वाद को इस आधार पर खारिज कर दिया कि मूल वादी तर्कपूर्ण साक्ष्य द्वारा यह साबित करने में विफल रहा था कि वादग्रस्त संपत्ति एच.यू.एफ के सहदायिको के कल्याण के लिए खरीदी गई थी एवं यह घोषणा की गई कि प्रथम प्रतिवादी को अपने नाम पर विवादित संपत्तियों को बेचने का अधिकार था।

७. अपीलीय न्यायालय ने वादी की अपील को यह मानते हुए अस्वीकार कर दिया कि प्रथम वादी का आशय था कि प्रथम प्रतिवादी पूर्ण स्वामी हो, और यह एक बेनामी संव्यवहार नहीं था। आगे यह अभिनिर्धारित किया गया कि यदि तर्क के लिये यह मान ले कि वह एक बेनामी स्वामी था (यह देखते हुए कि प्रथम वादी ने संपत्ति के लिए भुगतान किया था), कि बेनामी संव्यवहार (निषेध) अधिनियम, १९८८ (एतद पश्चात 'अधिनियम'), के प्रावधानों के अंतर्गत वाद प्रचलनशील नही था, क्योंकि वादी यह साबित करने में विफल रहे थे कि संपत्ति सहदायिकी के लाभ के लिये खरीदी गई थी। उच्च न्यायालय द्वारा दिनांक ०४.०४.२०१३ के विवादित निर्णय द्वारा दूसरी अपील को परिव्यय के साथ खारिज कर दिया गया। उच्च न्यायालय द्वारा दोहराया गया कि वादीगण यह साबित करने में विफल रहे थे कि संपत्ति सहदायिको के लाभ के लिए खरीदी गई थी और इसलिए वाद को प्रचलनशील ना होने से उचित रूप से खारिज कर दिया गया था। व्यथित होकर वादीगण द्वारा विशेष अनुमति याचिका प्रस्तुत की गई।

८. यह उल्लेखनीय है कि ममता बाई (तृतीय प्रतिवादी, पश्चातवर्ती क्रेता ने एक अवमानना याचिका दायर की थी जिसे इस न्यायालय द्वारा निराकृत किया गया था। इसके अतिरिक्त कार्यवाही के दौरान लक्ष्मीप्रसाद का नाम आवेदकगण की सूची से विलोपित किया गया एवं विधिक उत्तराधिकारियो को प्रतिस्थापित किया गया। मूल तृतीय वादी-श्रीमती सरिता (लक्ष्मी प्रसाद की पहली बेटी) की मृत्यु उच्च न्यायालय में अपील लंबित रहने के दौरान हो गई और किसी भी कानूनी विधिक प्रतिनिधि को रिकॉर्ड में नहीं लाया गया। इसलिए, वर्तमान में एकल याचिकाकर्ता-सुश्री पुष्पलता (पुत्री लक्ष्मी प्रसाद); प्रतिवादी क्. १.१- १.५ (विजय कुमार के विधिक प्रतिनिधि), प्रतिवादी क. २-राजेंद्र

कुमार (पुत्र लक्ष्मी प्रसाद और मूल द्वितीय प्रतिवादी), प्रतिवादी क. ३ और ४ (पश्चातवर्ती क्रेता), अन्य प्रतिद्वंद्वियों के साथ पक्षकार के रूप में अभिलेख पर उपस्थित है।

९. याचिकाकर्ताओं की ओर से अधिवक्ता द्वारा तर्क किये गये हैं कि प्रतिवादी, यानी दो बेटे, नाबालिग थे व उनका कोई स्वतंत्र आय का स्रोत नहीं था। उनके पास न तो उक्त संपत्तियों को खरीदने की क्षमता थी, न ही उन्हें अंतिरत करने की। यह निवेदन किया गया था कि वादी संपत्ति के संयुक्त मालिक थे, और सह-भागीदार होने के नाते, प्यार और स्नेह के कारण, संपत्तियों को प्रतिवादी बेटों के नाम पर पंजीकृत किया गया था। प्रतिवादियों द्वारा लिखित कथन में किये गये अभिवचनों से वादीगण को समर्थन प्राप्त हुआ है कि उनकी अपनी स्वीकारोक्ति से प्रतिवादी उस समय अवयस्क थे। इसके अतिरिक्त दितीय प्रतिवादी राजेंद्र कुमार ने वास्तव में याचिकाकर्ता के दावे को व्यवहार वाद में स्वीकार किया गया था।

१०. याचिकाकर्ता-वादी ने निवेदन किया कि इस मामले के तथ्य एवं तर्को के आधार पर यह स्थापित हुआ है कि संपत्ति बहुत पहले पिता यानी स्वर्गीय लक्ष्मी प्रसाद द्वारा एचयूएफ के लाभ के लिए खरीदी गई थी एवं उक्त संपत्ति को पुत्रो की संपित्त नहीं माना जा सकता है। अधिनियम की धारा-४(३)(ए) इस संबंध में यह प्रवधान करती है कि अधिनियम के अंतर्गत प्रत्यक्ष स्वामी, स्वामी के रूप में नहीं माना जा सकता है क्योंकि स्वामित्व एच.यू.एफ की ओर से था। इस का न्यायालय न्यायादष्टांत वल्लियाम्मल बनाम सुब्रमण्यम प्रस्तुत कर यह निवेदन किया गया है कि मात्र दस्तावेजी साक्ष्य ही नही परंतु आसपास की परिस्थितियाँ, जैसे कि किसने प्रतिफल अदा किया, पक्षकारो के मध्य संबंध, विक्रय उपरांत आधिपत्य की प्रकृत्ति इत्यादि पर भी विचार किया जाना चाहिए था। यह निवेदन किया गया था कि अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री जैसे कि अभिवचन एवं साक्ष्य वादीगण के दावे को स्थापित करते है। अधिवक्ता ने इस तथ्य पर जोर दिया कि प्रथम वादी का बयान संपत्ति के भुगतान करने के बारे में, और प्रथम दो प्रतिवादियों के उसके पुत्र होने के बारे में, अखंडित रहे है। इसके अतिरिक्त प्रथम प्रतिवादी द्वारा यह समर्थित करने के लिये कोई सामग्री प्रस्तुत की है कि उसके पास संपत्ति क्रय करने के लिये धन व साघन थे। इसी प्रकार दितीय प्रतिवादी द्वारा वादी का समर्थन किया गया था एवं और वाद के अभिवचनो को स्वीकार किया गया था; उसने भी वादीगण के समर्थन में गवाही दी थी। अधिवक्ता ने निवेदन किया कि इन परिस्थितियो में निचले दो न्यायालय के निष्कर्ष साक्ष्य के विपरीत थे। उच्च न्यायालय द्वारा विधि के प्रश्नो को वादी के पक्ष में निधार्रित ना करने में विधि की भूल की गई है।

११. उत्तरदाताओं की ओर से अधिवक्ता द्वारा विवादित निर्णय का समर्थन किया गया और निवेदन किया गया कि उच्च न्यायालय द्वारा उचित रूप से अधिनियम की धारा ४(१) द्वारा वर्जित होने के कारण वाद को अस्वीकार किया गया है और निवेदन किया गया है कि प्रथम अपीलीय न्यायालय तथ्य एवं साक्ष्य का अंतिम मध्यस्थ था एवं उक्त निर्णय में विधि के किसी महत्वपूर्ण की अनुपिस्थति में हस्तक्षेप नहीं किया जाना चाहिए।

१२. इसके आगे यह निवेदन किया गया है कि यह न्यायालय समवर्ती निष्कर्षों में शायद ही कभी हस्तक्षेप करती है। विधि की किसी भी स्पष्ट त्रुटि, या तथ्य के अनुचित निष्कर्ष की अनुपस्थिति में संविधान के अनुच्छेद १३६ के अंतर्गत विवेकाधिकार का उपयोग निचले न्यायालयों के निष्कर्षों को पभावित करने के लिये नहीं किया जाना चाहिए

विश्लेषण और निष्कर्ष

१३. उठाए गए विवादों के आलोक में, इस पर विचार किया जाना आवश्यक है कि अधिनियम के सुसंगत प्रावधान धारा २ 'बेनामी लेनदेन' को इस प्रकार परिभाषित करती हैः- कोई संव्यवहार जिसमें संपत्ति एक व्यक्ति को दूसरे व्यक्ति द्वारा किये गये भुगतान के आधार पर हस्तांतरित की जाती है। धारा-३, पत्नी या अविवाहित बेटी के लाभ के अतिरिक्त इस तरह के संव्यवहार को वर्जित करती है। धारा ४ इस प्रकार हैः-

"4. बेनामी संपत्ति की प्रत्युद्धरण के अधिकार का निषेध -

(1) बेनामी संपत्ति के संबंध में किसी भी अधिकार को प्रवर्त करने के लिए कोई वाद, दावा या कार्रवाई उस व्यक्ति के खिलाफ नहीं होगी जिसके नाम पर संपत्ति धारित है या किसी अन्य व्यक्ति के खिलाफ ऐसी संपत्ति का वास्तविक मालिक होने का दावा करने वाले व्यक्ति द्वारा या उसकी ओर से नहीं होगी।

(2) बेनामी संपत्ति के संबंध में किसी भी अधिकार के आधार पर, चाहे वह उस व्यक्ति के खिलाफ हो जिसके नाम पर संपत्ति रखी गई हो या किसी अन्य व्यक्ति के खिलाफ, किसी भी वाद, दावे या कार्रवाई में प्रतिरक्षा अनुज्ञात नहीं की जाएगी।

(3) इस धारा की कोई बात वहाँ लागू नहीं होगी -(क) जहां वह व्यक्ति जिसके नाम पर संपत्ति धारित है, वह हिंदू अभिव्यक्त कुटुंब में सह-भागीदार है और संपत्ति परिवार में सह-भागीदारों के लाभ के लिए रखी गई है; या (ख) जहां वह व्यक्ति जिसके नाम पर संपत्ति

धारित है, वह न्यासी या वैश्वासिक हैसियत में स्थित अन्य व्यक्ति है ,और संपत्ति किसी अन्य व्यक्ति के लाभ के लिए धारित है जिसके लिए वह न्यासी है या जिसके लिए वह ऐसी क्हैसियत में स्थित है ।

न्यायालयो ने समवर्ती निष्कर्षो में यह पाया था कि मामला अधिनियम की धारा-४(१) द्वारा वर्जित है, जबकि याचिकाकर्ता-वादी द्वारा निवेदन किया गया है कि धारा-४(३) का अपवाद वर्तमान मामले पर लागू होता है।"

१४. प्रथम प्रतिवादी-विजय कुमार (अब मृत) द्वारा दायर लिखित कथन में स्पष्ट स्वीकारोक्ति है कि वादग्रस्त संपत्ति, जब क्रय की गई थी तब वह अवयस्क था। हालांकि, उन्होंने यह नहीं बताया कि उन्होंने इसे कैसे खरीदा था। मात्र यह प्रार्थित किया गया है कि विचाराधीन कई संपत्तियों को उनके द्वारा अपने व अपने छोटे भाई के नाम पर क्रय की गई थी।

१५. हालांकि, विजय के छोटे भाई-राजेंद्र कुमार (द्वितीय प्रतिवादी) द्वारा वाद की कार्यवाही में प्रस्तुत अपने लिखित कथन में स्पष्ट रूप से वादग्रस्त संपत्ति के संबंध में यह अभिवचन किये गये है कि "प्रतिवादी क्रमांक-१ इस तथ्य को अच्छी तरह से जानते हुए कि वादी क्रमांक १ ने अपने परिवार के कल्याण के लिए उपर्युक्त संपत्ति खरीदी थी, जो कि संयुक्त संपत्ति है, इस भूमि के बेनामी होने का अनुचित लाभ उठाकर जानबूझकर भूमि विक्रय कर दी है, जबकि संपत्ति का वास्तविक स्वामी वादी क्रमांक -१ है " दूसरे शब्दों में, उन्होंने कार्यवाही में अपने पिता के साथ-साथ बहनों की स्थिति की संपुष्टि की एवं वाद के अभिवचनो को स्वीकार किया है। मुख्यपरीक्षण में उन्होने यह दोहराया है कि वादग्रस्त संपित्त उनके पिता की व्यक्तिगत आय से उनके बच्चों के कल्याण, शिक्षा, रखरखाव और आवश्यक व्यवस्थाओं के लिए क्रय की गई थी।

१६. लक्ष्मी प्रसाद ने अपने मुख्य परीक्षण में यह कथन किये है कि वादग्रस्त संपत्ति वर्ष १९६० में एच.यू.एफ. के लाभ के लिए क्रय की गई थी, प्रतिवादी उस समय १३-१४ वर्ष के थे। इसी तरह, दूसरी संपत्ति के संबंध में यह तर्क दिया गया था कि विजय कुमार १७-१८ वर्ष का था, और राजेंद्र कुमार ६-७ वर्ष का था। हालांकि स्पष्ट रूप से असंगत (दोनों बेटों की उम्र के संबंध में, यह देखते हुए कि दोनों संव्यवहारो में ६ साल के अंतर पर हैं) यह तथ्य स्पष्ट रहा जब संपत्तियां खरीदी गई थीं की ,उस स्तर पर दोनों बेटे अवयस्क थे। यह प्रश्न प्रतिपरीक्षण में लक्ष्मी प्रसाद के सामने रखा गया है कि क्या उनके ससुराल वालों (विजय कुमार के नाना-नानी) ने विजय को संपत्ति खरीदने के लिए पैसे

उधार दिए थे-जिसे उन्होंने अस्वीकार कर दिया था। हालांकि, यह ध्यान देने योग्य है कि विजय कुमार के लिखित अभिवचनो में (उनके नाना-नानी द्वारा धन देने की) ऐसा कोई अभिवचन नही है।

१७. जहां तक प्रतिवादियों का संबंध है, द्वितीय प्रतिवादी, राजेंद्र कुमार ने यह अभिवचन करते हुए कि वादी संपत्ति का स्वामी था, लिखित कथन में दावे को स्वीकार किया और यह भी अभिवचन किये गये है कि प्रथम प्रतिवादी संपत्ति के प्रत्यक्ष स्वामी के रूप में नामित होने का अनुचित लाभ प्राप्त करने का प्रयास कर रहा है।

१८. प्रथम प्रतिवादी (विजय कुमार) की याचिका का समर्थन करने के लिए अभिलेख पर कोई सामग्री उपलब्ध नहीं है कि वह संपत्ति का वास्तविक और असल स्वामी था। विचारण और प्रथम अपीलीय न्यायालय ने यह दर्शाने के लिए किसी भी सामग्री पर भरोसा नहीं किया है कि विजय कुमार के पास आय का कोई स्रोत था, या वह अपने पिता से दूर रह रहा था, या उस पर निर्भर नहीं था। विजय के नाना-नानी ने पैसे उधार दिए थे, इस अस्पष्ट सुझाव को वादी ने अस्वीकार कर दिया था; उस सुझाव के समर्थन में बचाव पक्ष के किसी भी साक्षी का परिक्षण नहीं किया जाना प्रतीत होता है।

१९. इस तथ्यात्मक पृष्ठभूमि के साथ, अधिनियम की धारा-४(३)(क) पर याचिकाकर्ता की निर्भरता और अधिनियम के तहत बेनामी संव्यवहार के निषेध के लिए इसके द्वारा प्रदान किए गए अपवाद पर पुनर्विचार की आवश्यकता है।

२०. दूसरी अपील में मामले पर उच्च न्यायालय का विचार, सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा-१०० के अनुसार, विधि के महत्वपूर्ण प्रश्नों तक सीमित है। इस न्यायालय के कई फैसलों में दोहराया गया है कि उच्च न्यायालय साक्ष्य या तथ्य का फिर से विश्लेषण नहीं कर सकता है। उच्च न्यायालय ने विधि के दो सारवान प्रश्नों की पहचान की-पहला,क्या निचली अपीलीय न्यायालय ने विचारण न्यायालय के निर्णय व डिक्री की पुष्टि करने में गलती की थी, और दूसरा, क्या यह अभिनिर्धारित करने में विधि की त्रुटि थी कि वादी द्वारा प्रस्तुत वाद के अधिनियम की धारा-४ के अधीन वर्जित है। *राजगोपाल रेड्डी बनाम पद्मिनी चंद्रशेखर* में इस न्यायालय के निणर्य के उपायो में उच्च न्यायालय ने कहा कि वाद अधिनियम की धारा-४ द्वारा वर्जित था क्योंकि वाद संपत्ति एच.यू.एफ. के सदस्यों के लाभ के लिए नहीं खरीदी गई थी।

२१. उन मामलों में न्यायालय का दृष्टिकोण, जहां दावा है कि कोई संपत्ति या संपत्तियों का समूह बेनामी है, पूर्व निर्णयो पर विचार करने के बाद न्यायदृष्टाात बिनापानी पॉल विरूद्घ प्रतिभा में

रेखांकित किया गया था, जहां इस न्यायालय द्वारा वल्लियम्मल विरूद सुब्रमणण से अनुमोदित उद्धरणों के साथ उद्धृत किया।

> *"४७ संव्यवहार की बेनामी प्रकृति के संबंध में प्रमाण भार प्रत्याथी पर भी था। इस मामले के इस पहलू पर न्यायादष्टांत वल्लियम्मल विरूद सुब्रमणण [(२००४) ७ एस. सी.सी.२३३] विचार कर इस न्यायालय की खंड पीठ द्वारा यह अभिनिर्धारित किया गया है किः -*
>
> *" १३. इस न्यायालय ने कई निर्णयों में यह अभिनिर्धारित किया है कि यह सुस्थापित है कि यह साबित करने का भार कि एक विशिष्ट विक्रय बेनामी है, उस व्यक्ति पर है जो यह आक्षेपित करता है कि संव्यवहार बेनामी है। बेनामी संव्यवहार का सार पक्षकारो एवं संबंधित पक्षकारो का आशय है और अक्सर, यह आश्य घने आवरण में छिपा होता है, जिसे आसानी से देखा ना जा सके। लेकिन इस प्रकार की कठिनाइयाँ उस व्यक्ति को अधिरोपित गंभीर दायित्व से मुक्त नही करती है जो यह दावा करता है कि संव्यवहार बेनामी था, आैर ना ही साक्ष्य के विकल्प के रूप में केवल अनुमानो की स्वीकृत को उचित ठहराती है। बीबी हाजरा [१९७४) १ एस. सी. सी. ३] कृष्णानंद अग्निहोत्री विरूध्द एम. पी. राज्य [१९७७) १ एस. सी. सी. ८१६: १९७७ एस. सी. सी. (सी. आर. आई.) १९०], ठाकुर भीम सिंह विरूध्द ठाकुर कान सिंह [(१९८०) ३ एस. सी. सी. ७२], प्रताप सिंह विरूध्द सरोजिनी देवी [१९९४ पूरक(१) एस. सी. सी. ७३४] और व्रजलाल जे. गणात्रा विरूध्द के उत्तराधिकारी। परशोत्तम एस. शाह के उत्तराधिकारी [(१९९६) ४ एससीसी ४९०]। उपरोक्त संदर्भित निर्णयों में यह अभिनिर्धारित किया गया है कि यह प्रश्न कि क्या कोई विशेष विक्रय बेनामी है या नहीं, काफी हद तक एक तथ्य है, और इस प्रश्न को निर्धारित करने के लिए कोई पूर्ण सूत्र या अम्ल परीक्षण, जो सभी स्थितियों में सामान्य रूप से लागू होता है, नही रखा जा सकता है। तदोउपरांत, इस न्यायालय ने निम्नलिखित छह परिस्थितियों को स्पष्ट किया जिन्हें लेन-देन की प्रकृति निर्धारित करने के लिए एक मार्गदर्शक के रूप में लिया जा सकता है।*
>
> *(१) वह स्रोत जिसस क्रय राशि प्राप्त हुई;*
> *(२) क्रय उपंरात संपत्ति की प्रकृति व आधिपत्य;*
> *(३) संव्यवहार को बेनामी रूप देने का उद्देश्य, यदि कोई हो;*

(४) पक्षकारों की स्थिति एवं दावेदार व अभिकथित बेनामीदार के बीच संबंध, यदि कोई हो;

(५) विक्रय के बाद स्वामित्व विलेखों की अभिरक्षा; और

(६) विक्रय के उपरांत संपत्ति के संबंध में पक्षकारो का आचरण; (जयदयाल पोद्दार विरूध्द बीबी हाजरा [(१९७४) १ एससीसी ३], एससीसी पी. ७, पैरा ६)

१४. उपरोक्त निर्देश व्यापक नहीं हैं और उनकी प्रभावकारिता प्रत्येक मामले के तथ्यों के अनुसार भिन्न होती है। फिर भी, विक्रय राशि किस स्रोत से आई थी ओर संपत्ति किस उद्देश्य से बेनामी क्रय की गई, यह निर्धारित करने के लिए सबसे महत्वपूर्ण परीक्षण हैं कि क्या एक व्यक्ति के नाम पर विक्रय ,वास्तव में दूसरे के लाभ के लिए है। हम वर्तमान संव्यवहार की जांच इन्ही दो बिन्दुआें के आधार पर करेगें।

१८. यह सुस्थपित है कि पक्षकारो का आशय बेनामी संव्यवहार का सार होता है ओर प्रतिफल राशि बेनामी के सिद्धांत का आह्वान करने वाले पक्ष द्वारा प्रदान किया जाना चाहिये। साक्ष्य स्पष्ट रूप से दर्शाता है कि मूल वादी के पास रमायी अम्मल के नाम पर संपत्ति खरीदने का कोई स्पष्टीकरण उपलब्ध नहीं था, उनके द्वारा प्रकट किया गया कारण बिल्कुल भी स्वीकार्य योग्य नहीं है। राशि के स्त्रोत को वादी से किसी प्रकार से जोडा नही जा सकता है। वादपत्र में नामित कोई व्यक्ति या किसी अन्य को साक्षीयों के रूप में परीक्षित नहीं किया गया था। वादी की संबंधित साक्षीगण के परीक्षण में विफलता वाद को पूरी तरह से ध्वस्त कर देता है।

२२. विधि के विषय में, यह सिद्धांत कि जो व्यक्ति यह आक्षेप करता है कि कोई संपत्ति बेनामी है और वास्तविक स्वामी की ओर से नाम मात्र के लिए धारित की जाती है-उन मामलों में जो धारा-४(३) के अंतर्गत अपवाद की श्रेणी में आते है- उस तथ्य को साबित करने के प्रारंभिक भार को विस्थापित करना होगा। एेसा प्रमाण साक्ष्य के माध्यम से या संचयी रूप से परिस्थितियों के माध्यम से हो सकता है। इस तथ्य को इस न्यायालय द्वारा "मार्सेल मार्टिन्स विरूध्द एम. प्रिंटर" में स्थापित किया गया था। उक्त मामले में, प्रश्न यह था कि क्या वसीयत के अभाव में, भाई-बहन में से एक के पक्ष में अधिकारों का हस्तांतरण, उनकी मृत्यु के बाद हित रखने वाले व्यक्ति (संपत्ति में किरायेदार के रूप में) द्वारा, अन्य उत्तराधिकारियों के अधिकारो को अपवर्जित कर सकता है। न्यायालय द्वारा यह माना कि स्थानांतरण नगरपालिका की एक आवश्यकता को पूरा करने के लिए किया गया था और

संपत्ति उस व्यक्ति के पास थी जिसके पक्ष में नामांतरण, *वैश्वासिक* क्षमता में, भाई-बहनों की ओर से अधिनियम की धारा-४(३)(ए) के अंतर्गत किया गया थाः

> *"२२. यह स्पष्ट है कि हालांकि "वैश्वासिक क्षमता" को सटीक रूप से परिभाषित नही किया जा सकता है, लेकिन इसका तात्पर्य एक ऐसे संबंध से है जो न्यासी और न्यास के लाभार्थियों के बीच संबंधों के अनुरूप है। यह अभिव्यक्ति वास्तव में अपने अर्थ में बहुत व्यापक है क्योंकि यह उन परिस्थितयों पर लागू होती है जहां पक्षकारो के मध्य संबध एक तरफ विश्वास व न्यास एवं दूसरी ओर सदभावना पर आधारित होते है।*
>
> *२३. यह निर्धारित करना कि कोई संबंध न्यास या विश्वास पर आधारित है, यह निर्धारित करने के लिये कि पक्षकार वैश्वासिक क्षमता में है, न्यायालय को उस तथ्यात्मक संदर्भ को ध्यान में रखना होगा, जिसमें प्रश्न उत्पन्न होता है, क्योकि तथ्यात्मक पृष्ठभूमि में ही किसी वैश्वासिक क्षमता के संबंध के अस्तिव या अन्यथा का अनुमान लगाया जा सकता है। यह कहने के बाद यह निर्धारित करने के लिए एक फिर वतर्मान वाद के तथ्यो की तरफ ध्यान दें कि क्या अपीलार्थी व वादी -प्रत्यर्थीयों के मध्य वैश्वासिक रिश्ता था।*
>
> *२४. प्रश्न के लिए प्रासंगिक परिस्थितियों में सबसे पहला और सबसे महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि विचाराधीन संपत्ति श्रीमती स्टेला मार्टिन्स-(पक्षकारो की माता) द्वारा किराए पर ली गई थी। यह अविवादित है कि उनके निधन के समय उन्होने कोई वसीयत नहीं छोड़ी थी और न ही यह सुझाव देने के लिए कोई अन्य सामग्री उपलब्ध है कि उनका आशय वाद संपत्ति में उनके द्वारा रखे गए किरायेदार के अधिकार को उनके पति, सी. एफ. मार्टिन्स या उसकी बेटियों (इस अपील में प्रत्यर्थी) या दोनों को छोड़कर अपीलार्थी को हस्तांतरित किया जाना था। सामान्य तौर पर, किरायेदार की मृत्यु के बाद, किरायेदारी के अधिकार निश्चित रूप से उसके विधिक उत्तराधिकारियों को दिए जाने चाहिए, जिसमें मृतक के पति व बच्चे (इस अपील के पक्षकार) भी शामिल होंगे। फिर भी अपीलार्थी के नाम पर संपत्ति को हस्तांतरित करने का कारण यह था कि निगम चाहता था कि इस तरह का हस्तांतरण एक व्यक्ति के नाम पर किया जाए, न कि कई व्यक्तियों के नाम पर। उस आशय का एक विशिष्ट अभिकथन वादी-प्रत्यर्थीयों द्वारा वाद के चरण क्. ७ में किया गया था, जिसे अपीलार्थी द्वारा प्रस्तुत लिखित कथन में विवादित नहीं किया था। इसलिए यह मान लेना उचित है कि अपीलार्थी के पक्ष में*

अधिकारों का अंतरण नहीं था, क्योंकि अन्य लोगों ने अपने अधिकारों का त्याग कर दिया था, परंतु निगम ने किसी एक व्यक्ति के पक्ष में हस्तांतरण करने की अपेक्षा की थी, संभवतः इस कारण से कि वाद के चरण में संपत्ति में अधिकारों और कर्तव्यों को निर्धारित करने में प्रक्रियात्मक जटिलताओं से बचा जा सकें। इस मापदंड पर यह मान लेना भी सामान्य रूप से उचित है कि मृतक-किरायेदार के अन्य विधिक प्रतिनिधियों ने न तो संपत्ति में अपने किरायेदारी के अधिकारों को त्याग दिया और न ही उन्होंने उन लाभों को त्याग दिया जो निगम द्वारा संपत्ति को विक्रय के निर्णय के परिणामस्वरूप मृतक किरायेदार के विधिक उत्तराधिकारी के रूप में उन्हें प्राप्त होंगे। इस निष्कर्ष को इस तथ्य से बल प्राप्त होता है कि पक्षकारो द्वारा वादग्रस्त संपत्ति के अधिग्रहण हेतु अदा किये गये प्रतिफल में योगदान दिया गया था, जो अन्यथा उनके द्वारा नही दिया गया होता यदि उनका आशय अपीलार्थी के पक्ष में संपत्ति के अधिकारो को स्वीकार करने का होता। उपरोक्त के अतिरिक्त यह महत्वपूर्ण है कि पक्षकार एक-दूसरे के निकट संबंधी थे, जोकि वादीगण के मामले को पर्याप्त समर्थन प्रदान करता है कि प्रतिवादी अपीलार्थी को वैश्वासिक क्षमता में किरायेदारी अधिकारी एवं दृश्यमान स्वत्व वादग्रस्त संपित्त के संबंध में पर्याप्त है, भाई-बहन जिनके पास उनके योगदान का कारण था और उनके पिता द्वारा किए गए योगदान से संपत्ति और उसके स्वामित्व में रुचि दिखाई देती है। अपीलार्थी के मामले में विश्वास व्यक्त करना मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में असामान्य या अप्राकृतिक नहीं था। विशेष रूप से जबकि वाद संपत्ति का उपभोग वादीगण द्वारा किया जाता रहा, जो विधिक रूप से और तर्क की समानता पर अपीलार्थी के लाभ के लिए उसी तरह का अधिकार रखते थे,जितना कि अपीलार्थी वादीगण के लाभ के लिए संपत्ति पर अधिकार रखते थे।

२५. उपरोक्त परिस्थितियों का संचयी प्रभाव जब पक्षकारों के पिता स्वर्गीय श्री सी.एफ.मार्टिन्स द्वारा भुगतान की गई पर्याप्त राशि के आलोक में देखा जाता है, तो अपीलार्थी को उक्त चार व्यक्तियों की तुलना में वैश्वासिक क्षमता में रखा जाता है। वाद में संव्यवहार को धारा-४ की उप-धारा ३ (बी) के तहत आने के कारण अधिनियम की धारा-४ की अपकार से पूरी तरह से बचाया जाता है। इसलिए, प्रत्यर्थियों द्वारा प्रस्तुत किया गया वाद अधिनियम द्वारा वर्जित नहीं था जैसा कि अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता द्वारा तर्क किया गया था।

२३. वर्तमान वाद में अभिलेख पर साक्ष्य और अभिवचनों के विश्लेषण से प्रकट होता है कि प्रथम वादी लक्ष्मी प्रसाद ने अभिकथन किया था कि संपत्तियाँ उनके बच्चो के भरणपोषण और शिक्षा के लिए खरीदी गई थीं; कि उन्होंने एक ठेकेदार के रूप में अपनी कमाई से ७,००,०००/- की लागत से दो मंजिला इमारत का निर्माण किया था और उक्त संपत्ति पर उनका आधिपत्य था। उन्होंने यह भी सकारात्मक रूप से अभिकथित किया है कि दोनों पुत्र (यानी, प्रत्यक्ष स्वामी) अव्यस्क थे, जिनका सपंति क्रय के समय आय का कोई स्रोत नहीं था। इसमें कोई संदेह नहीं है कि पहले प्रतिवादी (विजय कुमार) ने इन आक्षेपों का खंडन किया। हालांकि, उन्होंने इस बात से इनकार नहीं किया कि संपत्तियों को क्रय करते समय वह अव्यस्क थे; उन्होंने ना ही आय के किसी भी स्रोत के बारे में, ना ही संपत्ति क्रय के लिये किसी व्यक्ति द्वारा उधार राशि प्रदान किये जाने के संबंध में कोई अतिरिक्त अभिवचन किये है। दितीय प्रतिवादी (राजेंद्र कुमार) ने वाद के अभिवचनो को स्वीकार किया, और अपने पिता के पक्ष समर्थन में कथन किये है कि व आक्षेपित किया कि प्रथम प्रतिवादी बेरोजगार था और उसने अपने पिता पर हमला किया था।

२४. वादी लक्ष्मण प्रसाद ने अपने परीक्षण में यह अभिकथन किये है कि उसने वाद सपंत्ति उसके पुत्रो के नाम पर क्रय की थी और वह पुरे समय उसके आधिपत्य मे बना रहा। उन्होंने यह भी कहा कि वादग्रस्त संपत्ति उनके द्वारा किराए पर दी गई थी, जिसका समर्थन एक स्वतंत्र साक्षी द्वारा किया गया है, जो प्रतिपरीक्षण मे स्थिर रहा है और व्यक्त किया है कि उन्होंने वर्ष १९७२ में ४० रुपये प्रति माह के किराए पर संपत्ति ली थी और लक्ष्मण प्रसाद को किराये का भुगतान किया गया था।

२५. प्रथम प्रतिवादी और उसके द्वारा दावा करने वालों ने, वाद के क्रेता के रूप में, यह दर्शाने के लिए कोई साक्ष्य नहीं दिया कि प्रथम प्रतिवादी के पास संपत्ति खरीदने के लिए साधन या आय का कोई स्रोत था, वह लक्ष्मी प्रसाद पर आश्रित था और संपत्ति के अधिग्रहण के समय अव्यस्क था। इसके अलावा प्रथम प्रतिवादी ने असंगत अभिवाक भी किये -यह अभिवचन करने के अलावा कि वह उस संपत्ति का स्वामी था, उसने प्रतिकूल कब्जे के माध्यम से संपत्ति के स्वत्व धारण का अभिवाक किये, जिसका उसने साक्ष्य के दौरान समर्थन नहीं किया। यह उसके मामले के लिए घातक थाः इसके अलावा, लिखित कथन में उस दिनांक के संबंध में कोई विवरण नहीं था जब उन्होंने अपने पिता के विरूध्द प्रतिकूल कब्जे का दावा किया था।

२६. इन कारकों एवं इस न्यायालय द्वारा अधिनियम की धारा ४ (३)(क) के अधीन परिस्थितियों को विस्तृत करते हुए, घोषित विधि, जिसके अधीन बेनामी स्वामी के विरुद्ध दावा प्रमाणित हुआ कहा जा सकता है, के आलोक में अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य को देखते हुए विचारण

न्यायालय और प्रथम अपीलीय न्यायालय द्वारा दिये गए निष्कर्ष स्पष्ट रूप से त्रुटिपूर्ण हैं। उच्च न्यायालय द्वारा, इस न्यायालय की राय में, विधि की सही स्थिति समझने में त्रुटी की गई है।

२७. जहाँ तक इस न्यायालय के अधिकार क्षेत्र की विवेकाधिकार का बिन्दु है, अनुच्छेद १३६ के तहत, प्रत्यर्थियो द्वारा उचित रूप से इस बिन्दु पर प्रकाश डाला गया है कि न्यायालय शायद ही कभी समवर्ती निष्कर्षों में हस्तक्षेप करेगा। हालांकि, यह दोहराया गया है कि अधिकार क्षेत्र व्यापक है, और असाधारण मामलों में, हस्तक्षेप की आवश्यकता होती है, न्यायदृष्टांत कलेक्टर सिंह विरुद्ध एल.एम.एल. लिमिटेड में यह अभिनिर्धारित किया गया था किः -

> "९. संविधान के अनुच्छेद १३६ के तहत अधिकारिता असाधारण है और निचली न्यायालयों द्वारा दर्ज तथ्य के समवर्ती निष्कर्षों में हस्तक्षेप सामान्य रूप से नहीं किये जा सके परन्तु सिर्फ असाधारण मामलों में ही अनुमत है। संविधान के अनुच्छेद १३६ के अधीन अधिकारिता का प्रयोग करते हुए, जहां साक्ष्य का विवेचन पूरी तरह से असंतोषजनक पाया जाता है या उस से लिया गया निष्कर्ष विकृत प्रकृति का होता है, वहां यह न्यायालय मामले में पूर्ण न्याय करने के लिए समवर्ती निष्कर्षों में हस्तक्षेप कर सकता है। वाद के तथ्यों और परिस्थितियों में, हमारे विचार में, उच्च न्यायालय द्वारा पुष्टि की गई सेवामुक्ति की सजा को बरकरार रखते हुए श्रम न्यायालय के निष्कर्ष में हस्तक्षेप करने के लिए संविधान के अनुच्छेद १३६ के तहत अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करने के लिए एक उपयुक्त मामला है"

२८. इसी प्रकार, निज़ाम विरुद्ध राजस्थान राज्य में न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया किः -

> *"२०. आम तौर पर, यह न्यायालय भारत के संविधान के अनुच्छेद १३६ के अंतर्गत अपनी शक्तियों के प्रयोग में निचली न्यायालयों द्वारा दर्ज समवर्ती निष्कर्षों के साथ हस्तक्षेप नहीं करेगा। लेकिन जहां भौतिक पहलुओं को ध्यान में नहीं रखा गया है और जहां न्यायालय के निष्कर्ष अभिलेख पर साक्ष्य से असमर्थित हैं जिसके परिणामस्वरूप न्याय की विफलता* हुई है, तब वहाँ यह न्यायालय निश्चित रूप से हस्तक्षेप करेगा।"

२९. इस न्यायालय के मत में, उच्च न्यायालय द्वारा इस वाद की परिस्थितियों की अनदेखी करते हुए त्रुटि की गई, जहां पहले ही वादी ने साबित कर दिया था कि संपत्तियां उसके धन से खरीदी गई थी और उसके पुत्र अवयस्क थे, जिनके पास आय का कोई स्रोत नहीं था। सभी कार्यवाहियों के दौरान, दूसरे प्रतिवादी की स्थिति- यह थी कि संपत्ति पहले वादी की थी; दूसरे शब्दों में, उसने वाद के

अभिवचनों को स्वीकार किया। वादी ने उन किरायेदारों की, जो उसे किराया अदा करते थे, सकारात्मक साक्ष्य प्रस्तुत करके यह भी साबित किया कि उसके पास संपत्ति का कब्जा था। इन परिस्थितियों में, अधिनियम की धारा ४ (३)(क) के अर्थ के भीतर, बिनापानी पॉल और वल्लाम्मल में निर्णयों के संदर्भ में बेनामी स्वामित्व स्थापित करने के लिए आवश्यक तत्वों को प्रथम वादी द्वारा संतुष्ट किया गया है।

३०.उपरोक्त वर्णित कारणों से, अपील स्वीकार दी जाती है। परिणामस्वरूप वाद पूर्ण रूप से स्वीकार कर आज्ञप्ति पारित की जाती है। प्रकरण की परिस्थितियों में परिव्यय के संबंध में आदेश पारित नहीं किया जा रहा है।

समाप्ति नोटः-

१. द्वितीय अपील क्रमांक १७३८/२००५ में म.प्र. उच्च न्यायालय द्वारा पारित निर्णय दिनांक ०४.०४.२०१३

२. व्यवहारवाद क्रमांक ४७अ/९४ में द्वितीय व्यवहार न्यायाधीश वरिष्ठ खंड मण्डला द्वारा निर्णय दिनांक २९.०९.२००४

३.जिला न्यायाधीश मण्डला द्वारा व्यवहार वाद क्रमांक १९अ/२००४ में पारित आदेश दिनांक २६.०४.२००५

४.अवमानना याचिका क्रमांक ५०९/१५ में पारित आदेश दिनांक १६.०५.२०१८

५.आदेश दिनांक २७.०८.२०१८, अंतरिम आवेदन क्रमांक ९१५८८/१८ स्वीकार

६.आदेश दिनांक ११.०५.२०२२ अंतरिम आवेदन क्रमांक ८५६००/२१ स्वीकार

७.२००४ सप्लीमेंट्री (१) एस.सी.आर. ९६६

८.धारा ३ बेनामी संव्यवहार निषेध अधिनियम

९.(१९९५) २ एस.सी.सी. ६३०

१०.(२००७) ६ एस.सी.सी. १००

११.(२०१२) ५ एस.सी.सी. ३४२

१२.(२०१५) २ एस.सी.सी. ४१०

१३.(२०१६) १ एस.सी.सी. ५५०

nidhu shrivastava